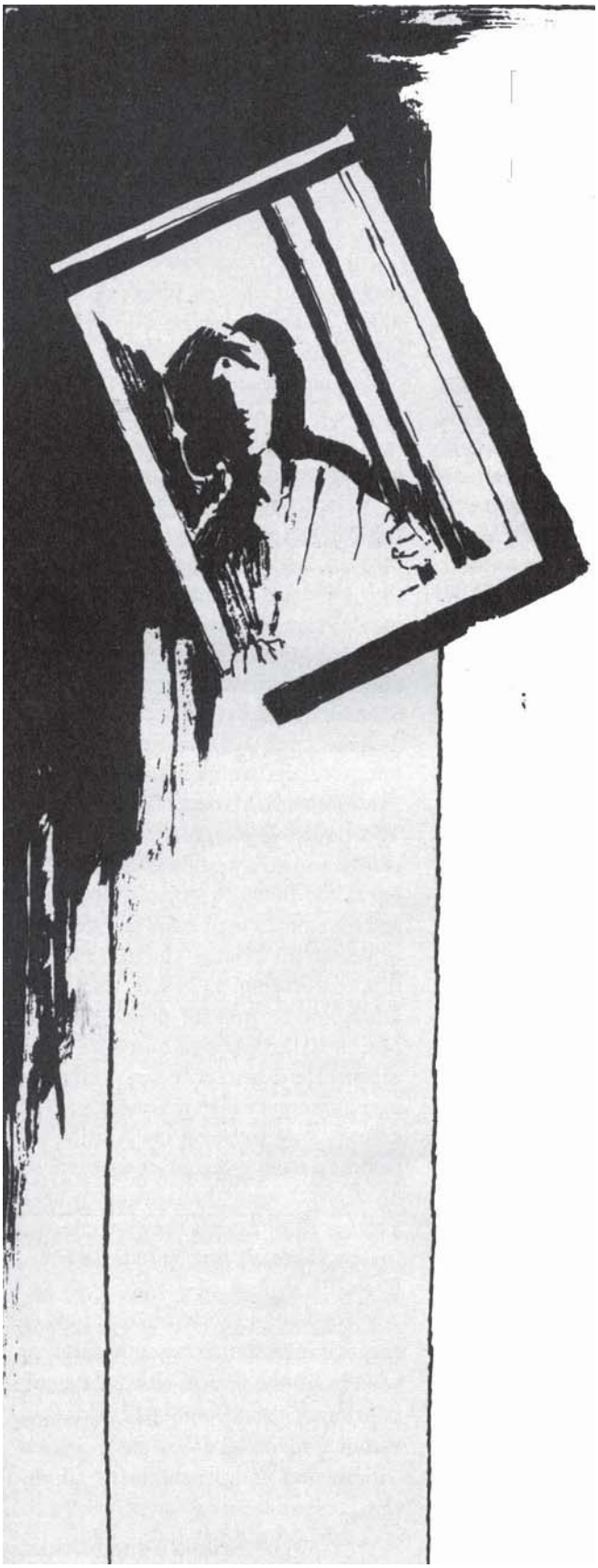

Poems
by
Archana Varma

translated by Ruth Vanita

आशंका

तूफान को बाहर बन्द
करने के लिए
खिड़कियां और दरवाजे भिड़ा चुकने
के बाद
देखा
कि मैं
भीतर बन्द हो गयी हूं।

Doubt

After closing doors and windows
to lock out the storm
I saw
that I
was locked inside

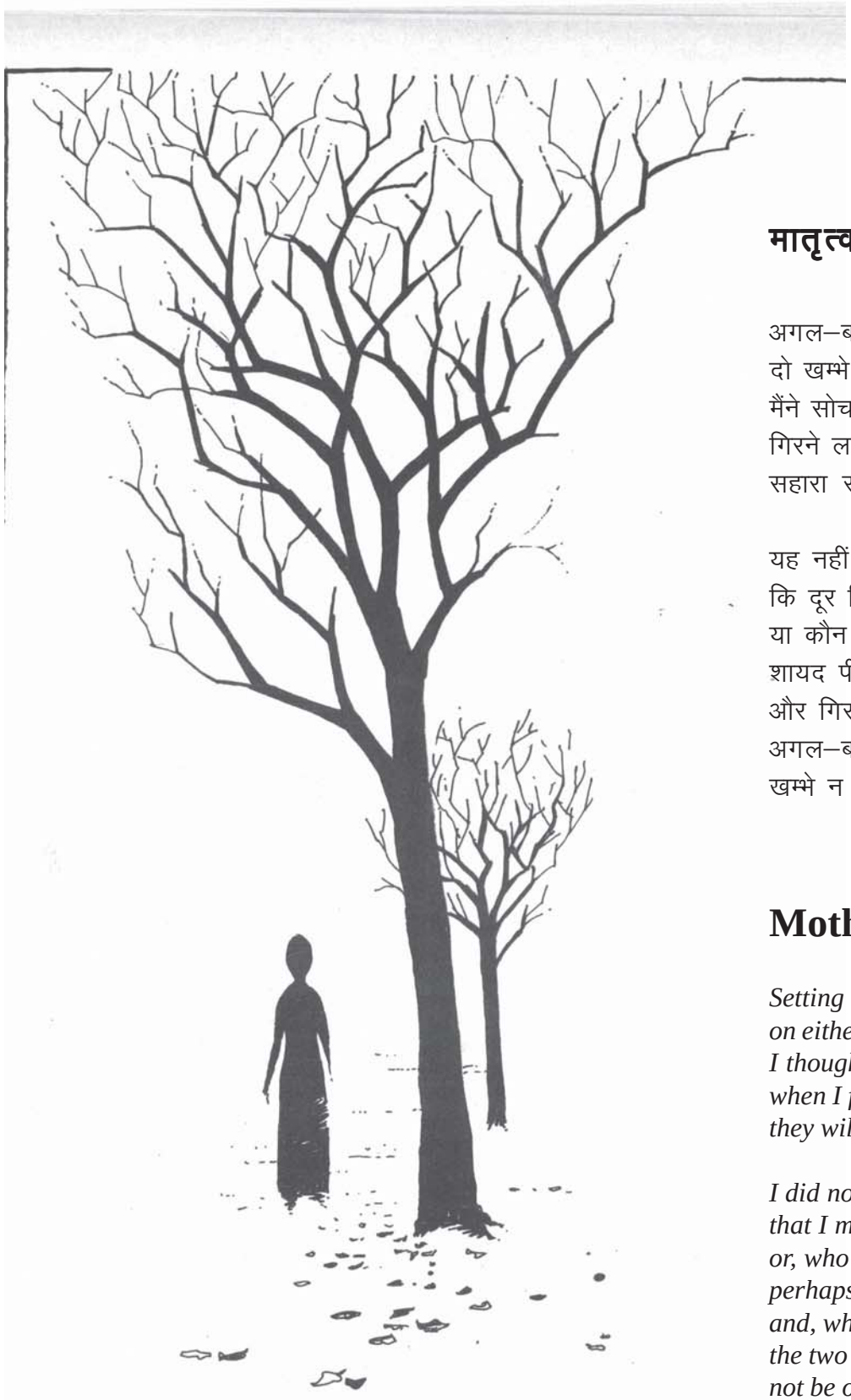

मातृत्व

अगल–बगल
दो खम्भे गाड़ कर
मैंने सोचा
गिरने लगूंगी तो
सहारा रहेगा।

यह नहीं सोचा
कि दूर निकल जाऊंगी
या कौन जाने –
शायद पीछे ही रह जाऊं
और गिरते समय
अगल–बगल
खम्भे न हों।

Motherhood

Setting up two pillars
on either side,
I thought,
when I fall
they will be a support.

I did not think
that I might go far ahead,
or, who knows,
perhaps, be left behind,
and, when I fall,
the two pillars
not be on either side.

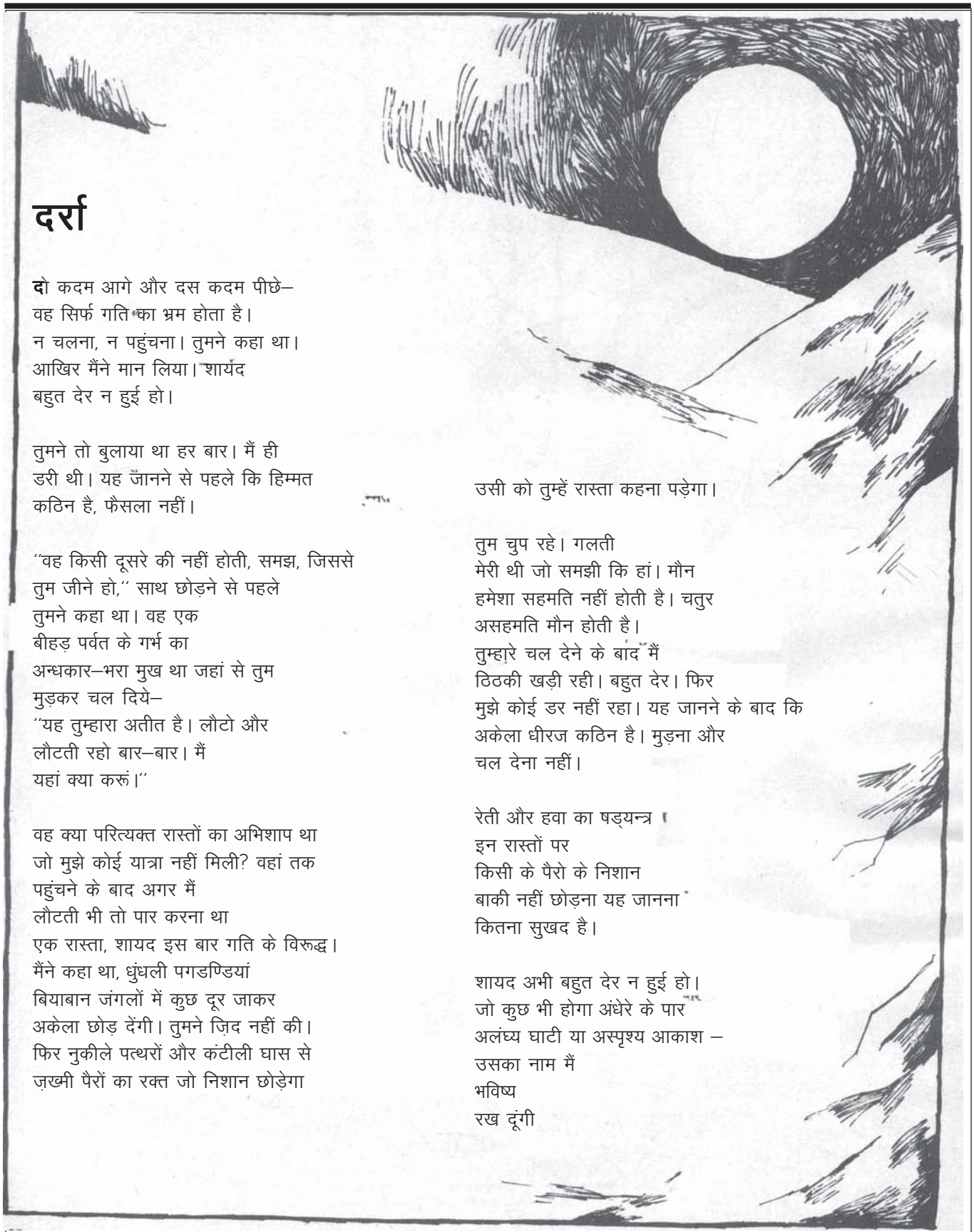

दर्रा

दो कदम आगे और दस कदम पीछे–
वह सिर्फ गति का भ्रम होता है।
न चलना, न पहुंचना। तुमने कहा था।
आखिर मैंने मान लिया। शायद
बहुत देर न हुई हो।

तुमने तो बुलाया था हर बार। मैं ही
डरी थी। यह जानने से पहले कि हिम्मत
कठिन है, फैसला नहीं।

''वह किसी दूसरे की नहीं होती, समझ, जिससे
तुम जीने हो,'' साथ छोड़ने से पहले
तुमने कहा था। वह एक
बीहड़ पर्वत के गर्भ का
अन्धकार–भरा मुख था जहां से तुम
मुड़कर चल दिये–
''यह तुम्हारा अतीत है। लौटो और
लौटती रहो बार–बार। मैं
यहां क्या करूं।''

वह क्या परित्यक्त रास्तों का अभिशाप था
जो मुझे कोई यात्रा नहीं मिली? वहां तक
पहुंचने के बाद अगर मैं
लौटती भी तो पार करना था
एक रास्ता, शायद इस बार गति के विरूद्ध।
मैंने कहा था, धुंधली पगडण्डियां
बियाबान जंगलों में कुछ दूर जाकर
अकेला छोड़ देंगी। तुमने ज़िद नहीं की।
फिर नुकीले पत्थरों और कंटीली घास से
ज़ख्मी पैरों का रक्त जो निशान छोड़ेगा
उसी को तुम्हें रास्ता कहना पड़ेगा।

तुम चुप रहे। गलती
मेरी थी जो समझी कि हां। मौन
हमेशा सहमति नहीं होती है। चतुर
असहमति मौन होती है।
तुम्हारे चल देने के बाद मैं
ठिठकी खड़ी रही। बहुत देर। फिर
मुझे कोई डर नहीं रहा। यह जानने के बाद कि
अकेला धीरज कठिन है। मुड़ना और
चल देना नहीं।

रेती और हवा का षड्यन्त्र
इन रास्तों पर
किसी के पैरो के निशान
बाकी नहीं छोड़ना यह जानना
कितना सुखद है।

शायद अभी बहुत देर न हुई हो।
जो कुछ भी होगा अंधेरे के पार
अलंघ्य घाटी या अस्पृश्य आकाश –
उसका नाम मैं
भविष्य
रख दूंगी

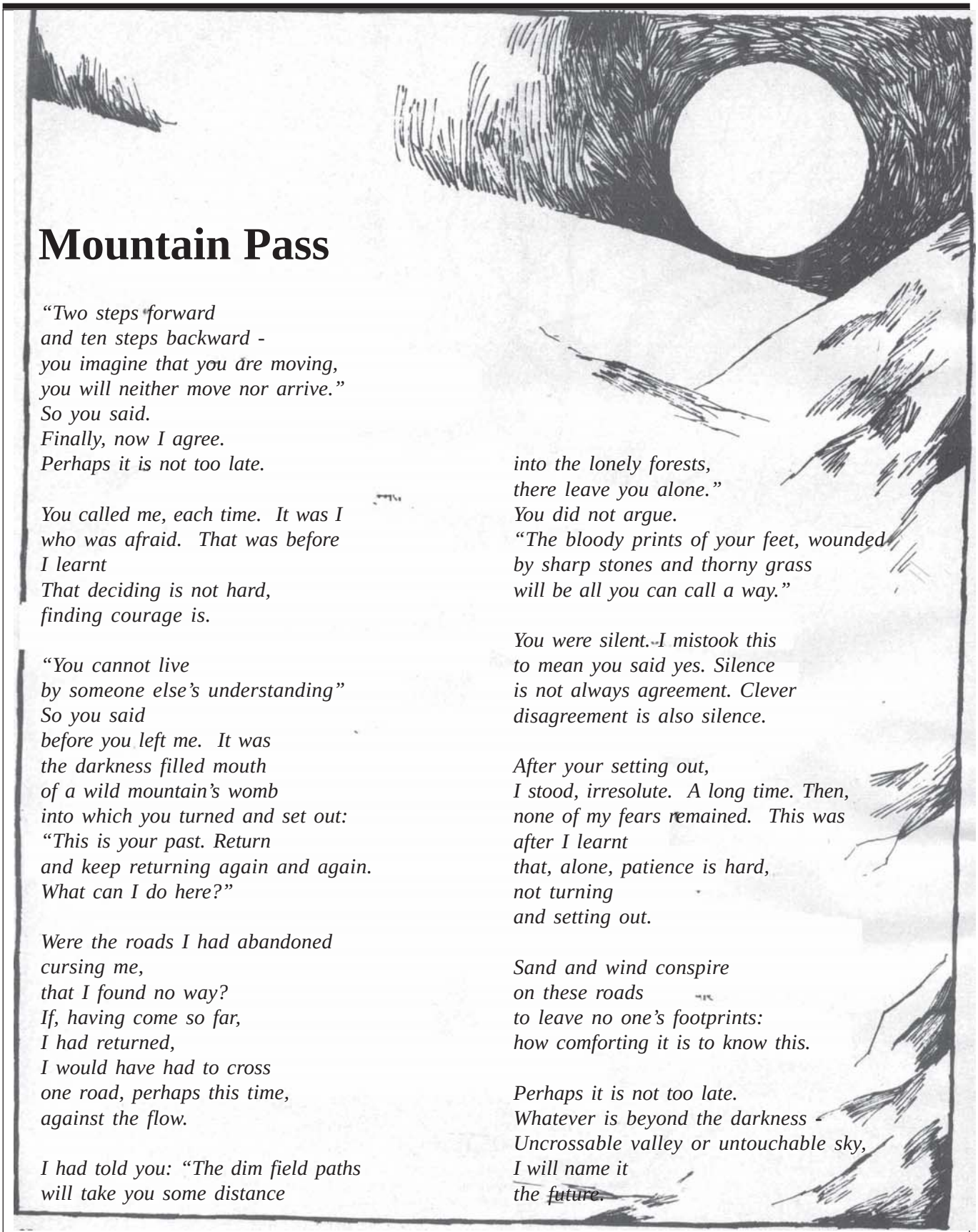

Mountain Pass

"Two steps forward
and ten steps backward -
you imagine that you are moving,
you will neither move nor arrive."
So you said.
Finally, now I agree.
Perhaps it is not too late.

You called me, each time. It was I
who was afraid. That was before
I learnt
That deciding is not hard,
finding courage is.

"You cannot live
by someone else's understanding"
So you said
before you left me. It was
the darkness filled mouth
of a wild mountain's womb
into which you turned and set out:
"This is your past. Return
and keep returning again and again.
What can I do here?"

Were the roads I had abandoned
cursing me,
that I found no way?
If, having come so far,
I had returned,
I would have had to cross
one road, perhaps this time,
against the flow.

I had told you: "The dim field paths
will take you some distance
into the lonely forests,
there leave you alone."
You did not argue.
"The bloody prints of your feet, wounded
by sharp stones and thorny grass
will be all you can call a way."

You were silent. I mistook this
to mean you said yes. Silence
is not always agreement. Clever
disagreement is also silence.

After your setting out,
I stood, irresolute. A long time. Then,
none of my fears remained. This was
after I learnt
that, alone, patience is hard,
not turning
and setting out.

Sand and wind conspire
on these roads
to leave no one's footprints:
how comforting it is to know this.

Perhaps it is not too late.
Whatever is beyond the darkness -
Uncrossable valley or untouchable sky,
I will name it
the future.